जनचेतना का प्रगतिशील कथा-मासिक

ISSN 2454-4450

मूल्य ₹ 60

हंस

फरवरी 2023

संपादक
संजय सहाय
प्रबंध निदेशक
रचना यादव
कार्यालय व्यवस्थापक
वीना उनियाल
प्रसार एवं लेखा प्रबंधक
हारिस महमूद
शब्द-संयोजन एवं रूपांकन
प्रेमचंद गौतम
कार्यालय सहायक
किशन कुमार, दुर्गा प्रसाद
मुख्य प्रतिनिधि (उ.प्र.)
राजेन्द्र प्रसाद जायसवाल
रेखाचित्र
रोहित प्रसाद, शैलेंद्र सरस्वती, सिद्धेश्वर, मार्टिन जॉन, कृष्ण कुमार 'अजनबी'

कार्यालय
अक्षर प्रकाशन प्रा. लि.
4229/1, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-2
व्हाट्सऐप : 9717239112, 9560685114
दूरभाष : 011-41050047
ईमेल : editorhans@gmail.com
वेबसाइट : www.hanshindimagazine.in

मूल्य : 60 रुपए प्रति
वार्षिक : 700 रुपए (व्यक्तिगत)
रजिस्टर्ड : 1100 रुपए
संस्था/पुस्तकालय : 900 रुपए (संस्थागत)
रजिस्टर्ड : 1300 रुपए
विदेशों में : 80 डॉलर
सारे भुगतान मनीऑर्डर/चैक/बैंक ड्राफ्ट द्वारा अक्षर प्रकाशन प्रा. लि. (Akshar Prakashan Pvt. Ltd.) के नाम से किए जाएं.

हंस/अक्षर प्रकाशन प्रा.लि. से संबंधित सभी विवादास्पद मामले केवल दिल्ली न्यायालय के अधीन होंगे. अंक में प्रकाशित सामग्री के पुनर्प्रकाशन के लिए लिखित अनुमति अनिवार्य है. हंस में प्रकाशित रचनाओं में विचार लेखकों के अपने हैं. उनसे हंस की सहमति अनिवार्य नहीं है. साथ ही उनके मौलिक या अप्रकाशित होने का उत्तरदायित्व संपादक और प्रकाशक का नहीं है बल्कि यह दायित्व रचनाकार का है.

प्रकाशक/मुद्रक : **रचना यादव खन्ना** द्वारा अक्षर प्रकाशन प्रा. लि., 4229/1, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-110002 के लिए प्रकाशित एवं चार दिशाएं, जी-39/40, सेक्टर-3, नोएडा- 201301 (उ.प्र.) से मुद्रित. संपादक–संजय सहाय.

फरवरी, 2023

मूल संस्थापक : **प्रेमचंद : 1930**
पुनर्संस्थापक : **राजेन्द्र यादव : 1986**

पूर्णांक-436 वर्ष : 37 अंक : 7 फरवरी 2023

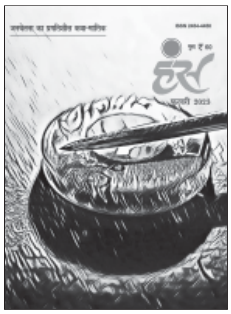

आवरणः अंतरिक्ष

जनचेतना का प्रगतिशील कथा-मासिक

इस अंक में

संपादकीय
4. सर्द रातों का स्वप्न : संजय सहाय

न हन्यते
6. बेनज़ीर ग़ज़लकार हरजीत सिंह : राजेंद्र शर्मा

अपना मोर्चा
8. पत्र

कहानियां
12. गुबरी : चौ. मदन मोहन समर
18. पोकर टेबल : सुषमा गुप्ता
24. रामलीला के जोकर : प्रीति प्रकाश
34. बीमार शामों को जुगनुओं की तलाश : किंशुक गुप्ता
50. पदुमा और मेघना : तसलीमा नसरीन (बांग्ला कहानी) (अनुवाद : चैताली सिन्हा)

कविता
48. सतीश कुमार शर्मा, अर्चना लार्क
49. वीना करमचंदाणी

कथेतर
57. मुठभेड़ें : शैलेंद्र सागर

ग़ज़ल
80. अमितेंद्र
87. कुमार विनोद, नीरज कुमार मनचंदा

परख
67. पढ़ा–मानो देख लिया : विश्वनाथ त्रिपाठी
69. कवि के कथा-देश में आलोचक : योगेश तिवारी
71. क्षमा मांगती-सी मुस्कान : विनय कुमार मिश्र
75. हरी पृथ्वी का समरस गान : रूपा सिंह
78. यातनामयी स्मृतियों से उपजी कहानियां : सुभाषचंद्र गुप्त
81. जीवनानुभवों का संचित कोश : गीता दूबे
85. जीवन के टुकड़ों से बुनी कहानियां : मनीष वैद्य
88. विवेकशील चेतना की अनवरत यात्रा : त्रिभुवन

शब्दवेधी/शब्दभेदी
90. लोकतंत्र की उम्मीद में : तसलीमा नसरीन

सृजन-परिक्रमा
92. ठहरे हुए सच की कथा : रश्मि रावत

रेतघड़ी
95-97

सर्द रातों का स्वप्न

जनवरी में बैठकर फरवरी अंक का संपादकीय लिख रहा हूं. मैं कैसे खुद को महीना भर भविष्य में प्रक्षेपित कर सकता हूं? सृजनात्मक साहित्य की बात अलग है. उसमें दो-चार महीने तो क्या, दस-बीस साल के इधर-उधर होने से भी कोई खास फर्क नहीं पड़ता. हां, साहित्यिक प्रवृत्तियां क्रांतिकारी रूप से बदल जाएं तो बात अलग! लेकिन ये भी इतनी तेज गति से नहीं बदलतीं. आज भी उन्नीसवीं शती के अंत और बीसवीं शती के पूर्वार्द्ध में लिखी गई रचनाओं की तर्ज पर कोड़ियों कहानियां चली आती हैं. माथा खुजाते-खुजाते असमय गंजा हो गया हूं. नवयौवनाएं 'अंकल जी' कहकर बुलाने लगी हैं. जाने कब दादा जी भी कहने लगेंगी—अपनी किस्मत, उनकी मर्जी! अपने उस्ताद की तरह मैं ताउम्र जवान रहना चाहता हूं. भरी जवानी में मरना चाहता हूं. आमीन!

साहित्यिक पत्रिका का संपादक हूं तो मुझसे अपेक्षा की जाती है कि साहित्य-केंद्रित संपादकीय लिखूं. मैं खुद भी ऐसा चाहता हूं. बार-बार तय करता हूं कि इस बार भक्तिकाल से रीतिकाल तक नुकीले पत्थर उछालूंगा, हिंदी नवजागरण के अनेक छद्मों का पर्दाफाश करूंगा, तमाम साहित्यिक धाराओं को समझने-समझाने की कुचेष्टा में भिड़ूंगा, या फिर उन अदबी देवों को दरकाऊंगा जो खामखा इतिहासकार भी बनने का स्वांग भरे बैठे हैं. आगे की दिशाएं भी उसी तरह से देख लूंगा जैसे जनवरी में बैठकर फरवरी का संपादकीय लिख रहा हूं! प्रबोधन/उद्दीपन या नवशास्त्रीय काल से फिसलते हुए स्वच्छंदतावाद, प्रकृतिवाद की धारा में बहते हुए छायावाद की संज्ञा पर नाक-भौं सिकोड़ते हुए यथार्थवाद के रास्ते नई कहानी से टकराऊंगा. फिर आधुनिकता, सामूहिकता पर केंद्रित उत्तर-आधुनिकता और जटिलताओं से भरे व्यक्तिवादी अस्तित्ववाद के अंतर और साम्य गिनाऊंगा. जादुई यथार्थवाद की गुत्थियों को सुलझाऊंगा. सब में मीन-मेख निकालूंगा...विद्वजनों से इन्हें सबके लिए सरल बनाने का आग्रह करूंगा, साथियों और अगली पीढ़ी के लेखकों से इस पर जागरूक होने की मांग रखूंगा, फिर इन प्रवृत्तियों की बेड़ियों से सर्वथा मुक्त होकर बिल्कुल नई उड़ानों की अपेक्षा करूंगा. इतनी मशक्कत इतिहास में एकाध पंक्ति तो दर्ज करा ही देगी. आत्म-मुग्धता के सागर में गोते लगाना बड़ा ही सुकून भरा होता है. पर भाई एक बार देख लो कि चड्डी बची भी है या उतरकर कहीं तिर रही है. ऐसा न हो कि गोताखोरी से बाहर निकलूं और खुद को नंग-धड़ंग पाऊं. किंतु साहित्य पर फोकस कर संपादकीय लिखने की सारी योजनाएं धरी की धरी रह जाती हैं. पिछले दस साल से तो यही देख रहा हूं. डॉन का स्मरण करता हूं. वह उनकी विलक्षण प्रतिभा थी और उससे निर्मित उनका कद्दावर बौद्धिक कद तथा उसके पीछे की वर्षों की वर्जिश कि वे समय-समय पर बड़े गंभीर साहित्यिक सैद्धांतिकी पर केंद्रित संपादकीय भी ठोक मारते थे. उनकी स्मृति को सादर नमन! लेकिन मैं जब भी ऐसा कुछ करने की तैयारी करता हूं तो एक बहाने के तौर पर ही सही देश-विदेश में कुछ न कुछ ऐसा जरूर घट जाता है या घटा दिया जाता है कि मैं वापस अपने कम्फर्ट ज़ोन में गोते लगाने लौट जाता हूं.

सौ साल बाद दुनिया फिर से सन्निपात की चपेट में है. अमरत्व प्राप्त करने की हवस में डूबे अनेक अल्फानर तरह-तरह की कवायद में जुटे हुए हैं. कोई फिजूलखर्ची का रिकॉर्ड तोड़ रहा है, संसद में बहसों से बचने वाला अरबों रुपए का नया संसद भवन गढ़वा रहा